भारत में ब्रिटिश साम्राज्य - पूर्व शिक्षा व्यवस्था

प्रो. धर्मपाल

ॐ स्वति पन्थामनुचरेम सूर्यचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददता धृता जानता संगमेमहि ॥

आज हम यहाँ इस बात पर विचार करने के लिए सम्मिलित हुए हैं कि भारतवर्ष में ब्रिटिश राज्य से पहले शिक्षा प्रणाली कैसी थी। क्या उस प्रकार की शिक्षा-प्रणाली की आज कोई प्रासंगिकता है? दो बातें हैं, एक ही विषय के दो पहलू हैं। बहुत प्राचीन काल में, (मैंने एक वैदिक ऋचा का गायन प्रारम्भ में किया) इस ज्ञान को देने के लिए गुरु और शिष्य केवल दो ही होते थे। एक और एक, इन दो का ही रिश्ता था। यह जो संख्या बढ़ी, यह कहीं आगे चलकर बहुत बाद में बढ़ी। गुरु प्रारम्भ में ठोक-बजा कर शिष्य को लेते थे- क्या यह शिष्य इस योग्य है कि मैं इसको शिक्षा का दान दे सकूँ, वेद का ज्ञान दे सकूँ, मनुस्मृति आदि अन्य स्मृति ग्रन्थों, उपनिषदों, ब्राह्मण-आरण्यक ग्रन्थों का ज्ञान दे सकूँ। बहुत पहले कण्व के आश्रम के बारे में हम जानते हैं, वहाँ बहुत बड़ी संख्या शिष्यों और शिष्याओं की नहीं थी। सान्दीपनि के आश्रम में भी बहुत ज्यादा शिष्य नहीं थे। हम तो केवल तीन ही नामों को अभी तक जानते हैं- कृष्ण तथा बलराम और सुदामा। हो सकता है कुछ और ब्रह्मचारी भी रहे होंगे। द्रोणाचार्य को भीष्मपितामह ने आमन्त्रित किया था कि वह राजकुमारों को शिक्षा दें। इसी परम्परा में पञ्चतन्त्र में चार बालकों का ज़िक्र आता है जिनको गुरु बाहर ले जाकर पढ़ाना चाहते हैं। एक चुटकुला भी प्रसिद्ध है - जब गुरु ने कहा, 'बेटे ये अमरूद तोड़ लो', बच्चों ने अमरूद तोड़ लिए। गुरु बोले 'बेटा, देखो, एक, दो, तीन, चार, ये चार अमरूद हैं।' एक दूसरा ब्रह्मचारी कहता है, 'देखो, यह गुरु तुम्हें पढ़ाना चाहता है, इसकी बात बिल्कुल मत सुनना।' ऐसी भी स्थिति कभी-कभी रही है। वह स्थिति केवल पहले की ही नहीं है, आज भी ऐसी ही स्थिति है। आज की कक्षा में असली छात्रों की संख्या निरन्तर घट रही है। उसका कारण यही है कि छात्रों के चित्त में है कि ये अध्यापक जो हमको पढ़ाना चाहते हैं, वह हमें नहीं पढ़ाना है। समाज जो पढ़ाना चाह रहा है, वह हमें पढ़ना है, यह परेशानी आज भी आ रही है।

पुरातन काल में जो गुरु और शिष्य की परम्परा थी, वह बहुत लम्बे समय तक चलती रही। वाराणसी नगर तो इस बात के लिए प्रसिद्ध था, आज भी है, पूरे देश के ही नहीं विदेश के लोग

भी कहा करते थे कि हमें काशी जा करके पढ़ना है। अगर ज्ञान का कोई भण्डार हो सकता था, भारतीय धर्म-ग्रन्थों और शास्त्रों का कोई भण्डार हो सकता था, तो वह यहाँ के गुरुओं के पास होता था। इस तरह की परम्परा, इस तरह का इतिहास आज भी मौजूद है कि दारा-शिकोह को उपनिषद् और संस्कृत पढ़ाने वाले विद्वान् काशी में थे। उन्होंने उनको पढ़ाया था। ऐसी परम्पराएँ यहाँ अभी भी हैं। चाहे उन पढ़ाने वालों का कुछ समय के लिए बहिष्कार ही क्यों न हुआ हो कि आप तो म्लेच्छों को पढ़ा रहे हैं , विधर्मियों को पढ़ा रहे हैं। परन्तु आज तो विश्वविद्यालय का तन्त्र आ गया है जहाँ सभी को पढ़ाया जाता है और कोई भी जाति या धर्म इन दोनों बातों का ध्यान नहीं रखा जाता, सभी लोगों को पढ़ाने की परम्परा है। ऐसी परम्परा बहुत पहले से प्रारम्भ हो चुकी थी। आरुणि, उपमन्यु आदि शिष्यों के नाम भी ऐसे शिष्यों के नाम हैं जब गुरु कहते थे कि मैं तो केवल ब्राह्मण बालकों को ही पढ़ाऊँगा । उन्हीं गुरु के बारे में प्रसिद्ध है कि एक बार वे अपने शिष्य की जंघा पर सिर रखकर के थोड़ी देर के लिए नींद में आ गये थे। शिष्य को साँप ने काटा खून निकला, गीला हुआ, गुरु ने देखा खून कहाँ से आया, शिष्य को पूछा, 'बेटा, यह खून कैसा ? तुमने यह पीड़ा कैसे सहन की और वह जान जाते हैं कि यह ब्राह्मण नहीं हो सकता यह तो कोई क्षत्रिय ही होगा जो उस पीड़ा को सहन कर सकता है। उनको क्रोध भी आता है। ऐसी शिक्षा की परम्परा थी, परन्तु एक बात जानने की है, सोचने-समझने की है, उस समय जो शिक्षा एक गुरु से शिष्य को आती थी, वह उस उद्देश्य से आती थी कि शिष्य अपने गुरु का नाम ऊँचा करे और कहा जाता था, 'मैं तो रामानन्द गुरु का शिष्य हूँ' या 'मैं तो अलग, स्वतन्त्र अनन्त गुरु का शिष्य हूँ।' इस तरह की परम्परा आती थी। जो योग्यतम हो उसको शिष्य बनाया जाता था। पाणिनि आदि की अष्टाध्यायी जैसे ग्रन्थों का, इन व्याकरण-ग्रन्थों का अध्ययन कराया जाता था जो धीरे धीरे चल कर सिद्धान्त कौमुदी जैसे सामान्य ग्रन्थों में परिवर्तित हो गया। आज मैं गुरुकुल का आचार्य हूँ, मैं वहाँ देखता हूँ साहित्य का अध्ययन करने वाले छात्र तो हैं, परन्तु व्याकरण पढ़ने वाले छात्र आज वहाँ भी नहीं हैं। एक तरह की वह जो परम्परा थी ज्ञान की, एक परम्परा थी व्याकरण के अध्ययन की वह परम्परा धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। इस परम्परा को समाप्त करने के मूल कारण क्या हैं, इस बात की ओर हम ध्यान देंगे ।

प्रारम्भ में रामायण के काल में, महाभारत के काल में और उससे आगे आ कर के भी भारतवर्ष के उस इतिहास के युग में जब भारत आज़ाद था, भले ही वह छोटे-छोटे रजवाड़ों में बँटा हुआ था, उस समय शिक्षा की व्यवस्था और मुग़ल-काल में जो शिक्षा की व्यवस्था हुई, उसके कारण क्या थे और आज की जो आधुनिक शिक्षा है, जो ब्रिटिश शासन की मूलतः देन है, वह क्या है और हमें आज कैसा करना चाहिए, इन बातों को हम धीरे-धीरे आज इस क्रम में

देखेंगे। मैंने कुछ संकेत (points) लिखे हुए हैं, मैं इनको धीरे-धीरे पढ़ूँगा भी। एक ग्रन्थ है 'Education in Muslim India' S.N. Zafar का। एक अलग ग्रन्थ है 'Promotion of Learning in India During the Mohammedan Rule' N.N. Law का। एक तीसरी पुस्तक है 'Education and Learning under the Great Mughals' B.K. Sahay की। 'Education in Medieval India' है Krishna Lal Ray की। ये चार ग्रन्थ हैं जिन्होंने उस समय के युग का दिग्दर्शन कराया है कि ब्रिटिश rule से पहले भारत में जब तुलसीदास का युग था उस समय किस तरह की शिक्षा थी। कुछ ज़िक्र आते हैं इतिहास के ग्रन्थों में क्योंकि शिक्षा की बात स्पष्ट तो किसी भी ग्रन्थ में शिक्षा-दर्शन से सम्बन्धित नहीं मिलती, परन्तु जो इतिहास के ग्रन्थ हैं, उनके माध्यम से ही हमें पता लगता है कि उस समय की शिक्षा किस प्रकार की थी। तवाकत-ए-नसीरी, The historical book refers to Muhammad bin Bakhtiyar Khilji 's 'conquest of Bihar' बिहार में मुहम्मद बिन बख्तियार खिलजी की जो विजय हुई थी, उसके बारे में है, परन्तु इसमें यह भी बताया गया है कि उस समय की जो Buddhist monastery थी, बहुत ही समृद्ध पुस्तकालय वहाँ पर थे और उस Buddhist monastery के समृद्ध पुस्तकालय के साथ-साथ वहाँ एक महाविद्यालय भी उससे सम्बन्धित था। उसका किस प्रकार उन्होंने विनाश किया, यह इस ऐतिहासिक ग्रन्थ में मिलता है। इससे तात्पर्य यह हुआ कि बौद्ध-कालीन जो एक बहुत विशाल पुस्तकालय और एक बहुत बड़ा महाविद्यालय था, जहाँ पर शिक्षा व्यवस्था चल रही थी, उसको इन सज्जन खिलजी के युग में समाप्त कर दिया गया और जब इसको समाप्त किया गया, निश्चय ही दूसरी तरह की शिक्षा-व्यवस्था भी प्रारम्भ की गई होगी। मैंने कुछ समय पहले एक लेख पढ़ा था कि इन Buddhist विहारों में किस प्रकार की शिक्षा-व्यवस्था थी। वहाँ पर बड़े-बड़े platform बनाये जाते थे। प्रातःकाल अध्यापक पाठ याद कराते थे, दोपहर बाद उस Platform पर एक, दो, तीन, चार Buddhist monks बैठते थे और जो पाठ प्रातःकाल में याद किया था, उसको दोहराते थे। जैसा आपने देखा होगा हिन्दू लोगों की पद्धति पालथी लगा कर बैठने की है, मुसलमानों की पद्धति घुटनों के बल बैठ कर झुकने की और एक तरह आगे-पीछे हो कर पढ़ने की है, उसी तरह Buddhist लोगों की पद्धति थोड़ा झुक करके हाथ बजा कर के पढ़ने की है । ऐसी पद्धति उस समय कायम थी। एक बात का और वहाँ पर ज़िक्र आता है कि जो छात्र वहाँ प्रवेश के लिए आते थे, वे संख्या में कम नहीं होते थे। वे तीन सौ चार सौ की संख्या में आया करते थे और मुश्किल से एक प्रतिशत वहाँ पर दाखिल हो पाते थे। ऐसी परम्परा इस बात का स्मरण दिलाती है जो हमारे गुरुकुलों में थी कि गुरु अपने शिष्य की परीक्षा ले करके ही उसको प्रवेश देते थे। अन्य ग्रन्थ का ज़िक्र आता है -The Nuh-Siphr of Amir Khusruइसमें जो educationऔर

learningब्राह्मणों की है, उसके बारे में बताया गया है। ब्राह्मण लोग केवल ब्राह्मण बालकों को अध्ययन कराते थे।

एक और ग्रन्थ है Firishtaका, जिसमें ज़िक्र किया गया है कि महमूद गवन ने जिस प्रकार संरक्षण दिया था शिक्षा को, बहमनी राज्य में as well as to the rich collection of books in the library at Bidar.बीदर दक्षिण भारत में कर्णाटक में है जो आज भी बहुत प्रसिद्ध स्थान है। वहाँ पर एक बहुत बड़ा गुरुद्वारा है, मुसलमानों का एक बहुत बड़ा engineering college चल रहा है और इसके लिए एक समृद्ध पुस्तकों का संग्रहालय था, जैसे मैं इस पुस्तकालय में देख रहा हूँ, विभिन्न विषयों से सम्बन्धित पुस्तकें यहाँ रखी गई हैं, ऐसा ही एक पुस्तकालय बीदर में था। बीदर मैंने स्वयं भी देखा है, जो पुराने समय की पाठशाला से बदल करके आज engineering college बन गया है।

एक बहुत प्रसिद्ध पुस्तक है 'बाबरनामा'। इसका नाम आप सब लोगों ने सुना होगा। इसमें गाज़ी खाँ के पुस्तकालय का ज़िक्र आया है। उसमें उद्धृत है कि सुल्ताना खलीफा बेगम और नूरजहाँ की कविताएँ इस पुस्तकालय में उपलब्ध थीं और इस पुस्तकालय की कुछ पुस्तकें आज भी हमें मिलती हैं। कुछ उस समय की पत्र-पत्रिकाएँ हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं - Tabaqat-e-Ahbani और इसमें Muntahat-e-Tawarikh of Badayuni, Tarif-e-Firishta, Khilasat-ul-Tawarikh of sujan Rai, Tabaluq-e-Nasiri, Akbar-Nama, Tarikh-e-Daudi, Tarikh-e-Sher Shahi of Abbas Sherwani, Tarikh-e-Firuzoshai of Amir Khusru, Padshahnama of Abdul Hamid Lahauri, Alamgiranama. इस तरह के ग्रन्थ इस बात का ज़िक्र करते हैं कि उस पूरे काल में किस तरह की शिक्षा व्यवस्था थी। कुछ इस तरह के ग्रन्थ हैं जिसमें एक से ज्यादा राजा क्या संरक्षण दिया करते थे, उसका ज़िक्र है और जो तीसरी तरह के ग्रन्थ हैं उनमें यह ज़िक्र है कि Firuz-e-Shahi अमीर खुसरो के समय, Padshahnama और Alamgirnama,इन के समय एक-एक बादशाह ने कितनी संस्थाएँ, कितनी पाठशालाएँ उस समय खुलवायी थीं। एक और ग्रन्थ है Tarikh-e-Gujarat जिसमें बताया गया है कि गुजरात में किस तरह की शिक्षा व्यवस्था उस समय चलती थी।

Ain-e-Akbari of Abul Fazal. अबुल फजल का नाम आप सबने सुना होगा, हिन्दी और उर्दू के कवि हैं। इसमें बताया गया है कि हिन्दू और मुस्लिम दोनों की शिक्षा-पद्धतियाँ Primary, secondary और higher secondary क्या थीं। और कुछ ग्रन्थ हिन्दुओं के भी हैं जैसे कवि कंकण का एक ग्रन्थ आता है 'चण्डी-मङ्गल'। 'मैमन सिंह'एक ballad का नाम

है। 'Chaitanya-Bhagawata' of Brindavan Das, Chand Bardai's Prthviraja-Raso, Malik Muhammad Jayasi's 'Padmavata', Manjhan's 'Madhumalati, Surdas, Tulsidas, Abdur-rahim, Bihari, Bhushan इनके ग्रन्थों में कहीं न कहीं गुरु और शिष्य परम्परा के ज़िक्र अवश्य आते हैं। सरल दास एक उड़िया भाषा के लेखक हैं। उन्होंने ग्रन्थ लिखा था 'महाभारत' उसमें पाठशाला का उल्लेख आया है। उस पाठशाला का विवरण ठीक वैसा ही है जैसे कि हमारे कश्मीर में शैव-दर्शन को पढ़ाने के लिए महाराजाओं के संरक्षण में खोली गईं पाठशालाओं का था। उनमें जिस प्रकार पढ़ाया जाता था, ठीक उसी तरह का वर्णन है। एक 'रुद्र-सुधानिधि' ग्रन्थ प्राप्त होता है, उसमें उच्च शिक्षा का ज़िक्र है। 'विक्रम-चरित-रास', यह गुजराती का ग्रन्थ है। है तो इतिहास का ग्रन्थ परन्तु Primary शिक्षा का ज़िक्र इसमें आया है। एक 'गुरु खालसा पंथ' गुरुमुखी में लिखी हुई किताब है इसमें शिक्षा की जो सिख पद्धति है, उसका वर्णन है। सिखों की जो पद्धति है, वह गुरु-शिष्य-परम्परा से बिल्कुल भी भिन्न नहीं है। जैसे हमारे यहाँ एक गुरु और एक शिष्य की परम्परा थी और शिष्य बारह वर्ष तक अध्ययन करता था, ठीक उसी तरह है। मध्यकालीन भारत में कोई नियमित सरकारी विभाग नहीं था जो शिक्षा व्यवस्था को देखता हो। आज तो basic education के department हैं, higher education के हैं, primary education के हैं, technical education के हैं और अनेक अलग-अलग शिक्षा विभाग को देखने के लिए हमारी सरकार में अलग-अलग मन्त्री हैं। परन्तु उस समय ऐसा कुछ नहीं था। राजा सीधे इन कामों को देखता था। राजा जिससे प्रसन्न हो जाता, उसको धन देता। राजा जिससे प्रसन्न नहीं होता, उसको धन नहीं देता था, और उसकी शिक्षा-संस्था गरीबी में चलती रहती थी।

एक ज़िक्र आया है कि एक अध्यापक राजा के पास गये, बोले कि मैं एक पाठशाला खोलना चाहता हूँ। उन्होंने दो चार संस्कृत के श्लोक बोले, वैदिक मन्त्र बोले, स्मृतियों से कुछ वाक्य बोले और कहा, देखिए, मेरा उद्देश्य होगा कि देश के लिए, राष्ट्र के लिए समर्पित नागरिक तैयार करूँ, आपकी सेना में भरती होने के लिए सिपाही तैयार करूँ, आप का जो कोष है, उसके लिए ऐसे क्लर्क तैयार करूँ, ऐसे कर्मचारी तैयार करूँ जो ईमानदार हों। उन्होंने कहा, ठीक है, मुझे आप का काम पसन्द आया और एक हजार सोने की मुहरें दे दीं। वह चला गया, उसने एक विद्यालय वहाँ पर खोल दिया। दो, तीन, चार, पाँच साल बाद, वहाँ के जो कर्मचारी अध्ययन करके निकले, उनको नौकरियाँ मिलीं, वे वास्तव में ईमानदार थे। राजा के कानों तक शोहरत पहुँची, राजा ने कहा, मुझको उस विद्यालय को देखना चाहिए। उन्होंने वहाँ के अध्यापक को लिखा कि मैं विद्यालय को देखना चाहता हूँ। अध्यापक ने उनको पत्र के उत्तर में लिखा, राजा, आप मेरे विद्यालय में न आयें। दूर से आप को खुशबू मिल रही है, आप इससे ही सन्तुष्ट रहें।

क्योंकि यदि आप यहाँ आयेंगे तो मेरे जो बालक यहाँ हैं जिनको मैं आदर्श का पाठ पढ़ा रहा हूँ, उस दिन क्योंकि आप आयेंगे, और क्योंकि आप ने मेरी आर्थिक सहायता की थी, मैं आपके सामने झुकूँगा, आप का सम्मान करूँगा- मेरे ये बालक सोचेंगे कि मेरे अध्यापक से भी बड़ा आदर्श कोई राजा हो सकता है। और आप के इतिहास को तो रोज ये पढ़ते हैं । आप न जाने कितनों को कोड़े लगवाते हैं , न जाने कितनों को फाँसी देते हैं, न जाने कितने चोरों को पकड़ते हैं, जब आपको ये देखेंगे तो इनके मन में कहीं ऐसा न हो कि कोई अन्य भावना आ जाय। आप की तो अपनी आदत है, जो सामान आप खरीदते हैं, शायद उसमें से कुछ बचा कर के अपने व्यक्तिगत कोष में डालते हैं।' इतनी दो टूक बात कोई साधारण अध्यापक नहीं कह सकता था, कोई चरित्रवान् अध्यापक ही कह सकता था। राजा झुक गया, राजा ने लिखा 'ठीक है, मैं आपके विद्यालय में नहीं आ रहा हूँ। आप ऐसा ही काम करते रहें।' उस समय ऐसे राजा का मान होता था, ऐसे अध्यापक का सम्मान होता था। शायद आज परिस्थितियाँ बदल गई हैं। आज के अध्यापक और आज हम लोग तो थोड़े-थोड़े लाभों के लिए न जाने कहाँ-कहाँ जाने लगे हैं। ठीक है, राजाश्रय चाहिए, राजाश्रय उस अध्यापक को भी अपेक्षित था, परन्तु अपने उद्देश्यों के अनुरूप ही।

पहली बार यदि कोई विभाग शिक्षा का खोला था तो राजा बाबर ने खोला था। राजा बाबर ने भी शिक्षा का कोई सीधा department नहीं खोला। उन्होंने PWD खोला 'शुहरत-ए-आम' इसको नाम दिया गया है, इसको school, college प्रारम्भ करने का काम सौंप दिया। इन्होंने मखतब शुरू किया, मदरसे शुरू किये और खानगाह शुरू किए। खानगाह में सन्त लोग अपने केन्द्र में कुछ लोगों को बुला कर शिक्षा देते थे। खानगाह बिल्कुल ऐसा ही है, जैसा यह 'ज्ञान-प्रवाह' है। इसमें आवश्यक नहीं था कि कोई दो साल पढ़े, चार साल पढ़े, या बारह साल पढ़े। खानगाह का तात्पर्य यह होता था कि वहाँ पर एक सन्त रहते थे उस सन्त के पास कोई भी व्यक्ति अपनी समस्या को लेकर आ सकता था अपनी समस्या उनके सामने प्रस्तुत कर सकता था। उस समस्या को वे सन्त सुलझा देते थे। इसको खानगाह कहा गया। यह 'ज्ञान-प्रवाह' ठीक उसी का रूप हो सकता है कि यहाँ पर बैठे हुए व्यक्ति के पास कोई व्यक्ति अपनी निजी समस्याओं को ले कर आये और उन समस्याओं को सुलझा दिया जाय। मखतब और मदरसे में नियमित शिक्षा थी। मखतब primary education के लिए था, मदरसा secondary education के लिए था। और यह नहीं कि वहाँ पर केवल उर्दू की शिक्षा थी। ऐसी भी संस्थाओं का ज़िक्र आता है कि मुसलमानों के द्वारा प्रारम्भ की गई एक ही शिक्षण-संस्था में वैदिक hymns बोले जाते थे, Buddhist scriptures बोले जाते थे, कुरान की आयतें बोली जाती थीं और Prophet

के हदीस बोले जाते थे। उस समय Persian court की language बन गई और जब court की language persian बनी उसमें हिन्दी के शब्दों का मिश्रण हुआ और Arabic, Persian और Hindi तीनों शब्दों को मिला कर जो भाषा बनी, वह दिल्ली के आस-पास की भाषा थी और वह थी उर्दू।

मुहम्मद गोरी 1151-52 में भारत आया था। He was the first Muslim King to promote education in India. At Ajmer he established some schools to spread Islamic culture.

मैंने बताया पहले जो संस्थाएँ थीं, भले ही वे मुसलमानों द्वारा प्रारम्भ की गई हों, उन संस्थाओं में वैदिक, Buddhistic ज्ञान था, और पढ़ाया जाता था, परन्तु मुहम्मद गोरी के आने के बाद तो केवल शुद्ध मुस्लिम और Persian culture को बढ़ाने के लिए प्रारम्भ हो गया। कुतुबुद्दीन ऐबक नाम आपने सुना होगा 1206-10 में आया, दिल्ली में मदरसे खुलवाये। उसका बेटा, शिष्य, उत्तराधिकारी था इल्तुतमिश, जिसने कुतुब-मीनार बनवाई थी। उसने दिल्ली और बदायूँ में मदरसे खोले। रजिया सुल्ताना ने 1236-40 में सुअज्जी college प्रारम्भ किया। नसीरुद्दीन महमूद ने जालन्धर में college खोला। जालन्धर के लिए बड़ा प्रसिद्ध है कि वहाँ आगे चल कर के इसाइयों ने भी संस्थाएँ खोलीं। जालन्धर में आर्य समाज की महिला संस्था सबसे पहले खुली। नसीरुद्दीन के मुख्य मन्त्री थे बलबन। उन्होंने नसीरिया college खोला। उसके बाद गियासुद्दीन बलबन हुए, इनकी जो संस्थाएँ थीं वे-Theology, Mathematics, Astronomy, Physics इत्यादि से सम्बन्धित थीं। जो ज्ञान केवल पहले धर्म-ग्रन्थों तक सीमित था यानि Theology तक सीमित था, वह आगे बढ़ चला।

Mathematics, Astronomy, Physics, इन विषयों का भी ज्ञान इसमें सम्मिलित हो गया। परन्तु जैसा वेद का ज्ञान प्रारम्भ में गुरुकुलों में था शास्त्र-ग्रन्थों में ब्राह्मण-ग्रन्थों में दिया जाता था, वहाँ पर Physics और Mathematics विद्यमान है। वहाँ पर आज का जो सूक्ष्म-जीव-विज्ञान Micro-biology है, वह भी उपलब्ध था। मैं इसको इसलिए जानता हूँ कि मेरे विश्वविद्यालय में जो विज्ञान के अध्यापक हैं, वो वेद और विज्ञान को लेकर के विभिन्न विषयों पर शोध कर रहे हैं।

अलाउद्दीन खिलजी ने हौज खास में एक मदरसा खोला। मुहम्मद तुग़लक ने दिल्ली में एक मदरसा खोला, फिरोज शाह तुग़लक ने एक संस्था खोली। Elliott and Dowson, ये दो साहित्यकार एवं इतिहासकार हैं, इन्होंने इसका ज़िक्र किया है। सैयद बादशाह, बहलोल लोदी,

सिकन्दर लोदी, सुल्तान अहमद शाह, ये केवल दिल्ली और उत्तर भारत तक सीमित नहीं रहे। इन्होंने अहमदाबाद और गुजरात में भी जा कर संस्थायें खोलीं। सुल्तान सिकन्दर शाह ने कश्मीर में संस्थाएँ प्रारम्भ कीं।

बाबार का ज़िक्र मैं पहले भी कर चुका हूँ। सबसे पहले जो एक established department दिया PWD के माध्यम से वह उन्होंने दिया था। हुमायूँ और शेरशाह के बाद अकबर ने उसे चालू रखा। अकबर का एक स्वप्न था कि मैं एक ऐसी कौम का निर्माण करूँ जिसमें कोई मजहबी बात न आये, सब एक तरह के हो जायें परन्तु उसका स्वप्न पूरा न हो सका क्योंकि उसकी आने वाली पीढ़ी में जहाँगीर और उससे भी आगे औरंगजेब आये, ये बहुत कट्टर-परस्त लोग थे जो उस स्वप्न को पूरा न कर पाये। जहाँगीर, शाहजहाँ, उनकी पुत्री जहाँआरा बेगम. दारा शिकोह, इन्होंने उपनिषदों का स्वयं अनुवाद किया, भगवद् गीता योगवासिष्ठ, रामायण और वेदों का इन्होंने अनुवाद कराया। अनेक संस्कृत पाठशालाओं को इन्होंने संरक्षण दिया। आज भी दिल्ली में दारा शिकोह के नाम का एक बहुत बड़ा पुस्तकालय कश्मीरी गेट के पास है और उस में अनेक चार सौ वर्ष पुराने ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं जो भारत सरकार के संरक्षण में हैं।

ऐसी एक जगह है रामपुर। रामपुर की जो library है, है तो वह नवाबों की library पर उसमें वेद, दर्शन और इस प्रकार के अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं। कुछ ग्रन्थ उर्दू लिपि में भी उपलब्ध हैं। पुराने जमाने में जो हिन्दुओं के धर्म-ग्रन्थ होते थे, वे भी उर्दू लिपि में लिखे जाते थे, (राजा जयसिंह और रामदेव, आलमगीर) औरंगजेब ने Fine arts की शिक्षा जो कहीं भी प्रारम्भ थी, इसको बहुत हतोत्साहित किया क्योंकि वह बहुत कट्टरपन्थी था।

अब आगे मैं ज़िक्र करना चाहता हूँ शिक्षा-भवनों का। मखतब और मदरसा मैंने पहले बताया। मस्जिद और विहार तथा कुछ निजी भवन जैसे हमारे गुरुकुल थे, इसी तरह मुल्ला, मौलवी और मौलाना, ये लोग निजी भवनों में भी शिक्षण-संस्था चला रहे थे। काशी के लोगों के लिए कोई बात ऐसी नहीं है जिसको वे जानते न हों, यहाँ अनेक गुरुओं के सान्निध्य में रह कर छात्रों ने, ब्रह्मचारियों ने, अध्ययन किया है और उनके नाम को रौशन किया है। इनके लिए कोई भी छपी हुई पुस्तकें नहीं होती थीं। प्रात: और सायंकाल कक्षाएँ होती थीं, tution fee नाम की कोई चीज नहीं थी, हाँ ब्रह्मचारी के लिए यह छूट थी कि वह चाहे तो अन्त में गुरु-दक्षिणा दे और यदि कोई धन के लिए पढ़ाता था तो उसको अच्छा नहीं माना जाता था। धन के लिए पढ़ाने की परम्परा तो अंग्रेजों के समय से प्रारम्भ हुई है। उस समय राजा का आश्रय जरूर प्राप्त था परन्तु शिष्यों से धन या शुल्क बिल्कुल नहीं लिया जाता था। पढ़ना चाहने वाले सभी ब्रह्मचारियों के

लिए शिक्षा खुली थी। दण्ड की व्यवस्थाएँ उस समय भी थीं। cane से, डण्डे से, थप्पड़ मार कर, कान पकड़ कर, इस तरह की दण्ड की व्यवस्था उस जमाने में भी चल रही थी। उच्च शिक्षा के लिए आगरा में, मिर्जा मुफलिस, उज्बेग, इन लोगों ने बहुत अच्छा काम किया। हुमायूँ ने दिल्ली में, यमुना के किनारे एक school बनवाया था। महम नङ्ग नाम की एक नर्स थी, उसने खैरूँ मंजिल और मदरसा-ए-बेगम बनवाया। declination and consummation, grammar and syntax, logic, philosophy, mathematics, rhetoric, jurisprudence, principles of jurisprudence, dialectics, exigencies and traditional subjects- - इन सारे विषयों को ये लेकर के चले। कुछ नये विषय इन्होंने और जोड़ दिये, उनमें literature, obligations, disputations और principles of hadis थे। वास्तव में इन सब के माध्यम से ये अपने Islamic cultureको भी फैलाना चाहते थे। और भारतीय कानून की शिक्षा देना भी उनका उद्देश्य था। higher studies के subjects उस समय, mathematics astronomy, astrology, medicine, philosophy, history and geography इत्यादि थे। ख्वाजा अमीरुद्दीन नूरी, हाफिज मुहम्मद खयूयम, ये बड़े प्रसिद्ध गणितज्ञ-विद्वान उस समय के माने जाते हैं। गुरु और शिष्य के बीच जो रिश्ता था, वह बहुत ही सौहार्द्रपूर्ण, सद्भावपूर्ण होता था। यानि गुरु और शिष्य बिल्कुल पिता और पुत्र की तरह रहा करते थे। उस समय की जो डिग्रियाँ थीं, इस प्रकार थीं Theology में जो आदमी योग्यता हासिल करता था, उसको 'आलिम' कहते थे, जो साहित्य में डिग्री प्राप्त करता था, उसको 'काबिल' कहते थे। और जो कानून, दर्शन, तर्कशास्त्र और दर्शनशास्त्र में डिग्री प्राप्त करता था, उसको 'फ़ाज़िल' कहते थे। आलिम, काबिल, फ़ाज़िल, ये शब्द सुने होंगे। गुरुकुल काँगड़ी में भी न जाने क्यों शायद इसी तरह कि डिग्रियाँ दी गईं और आज भी हैं। जो डिग्री हम वेद, दर्शन और संस्कृत की देते हैं, उस डिग्री का नाम 'वेदालङ्कार' है। 'आलिम' Theology की डिग्री है। जो हम साहित्य की डिग्री दे रहे हैं,उसका नाम 'विद्यालङ्कार' है। और जो 'फ़ाज़िल' की डिग्री थी logic और philosophy की, एक वहाँ पर 'सिद्धान्तालङ्कार' की डिग्री पहले होती थी, आजकल वह नहीं चल रही है।

एक अंग्रेज़ राजदूत थे Sir Thomas Rowe जो जहाँगीर-काल में मुग़ल court में आए थे, उन्होंने भी इस शिक्षा पद्धति का ज़िक्र किया है। इसका अध्ययन भी किया है। वास्तव में राजदूत का काम केवल यह है कि जहाँ कमजोरियाँ हैं अपने देश को बता देना कि आओ, आप यहाँ पर व्यापार कर सकते हो। जहाँ अच्छाइयाँ हैं उनको बता देना कि ये अच्छाइयाँ हम अपने देश में किस तरह ले जा सकते हैं। Sir Thomas Rowe जो मुग़ल-काल में जहाँगीर के court में आये थे, यह समझ लीजिए कि आये तो बड़े मित्र बन कर थे परन्तु धीरे-धीरे हमारे शासक बन बैठे।

हिन्दू शिक्षा में ब्राह्मण अध्यापक का पहले बोलबाला था। अक्षर पढ़ना, लिखना और अङ्कगणित केवल इतना पढ़ाया जाता था। उपनयन संस्कार पाँच से आठ वर्ष की आयु में सामान्यत: होता था। गुरु नानक का उपनयन संस्कार सात वर्ष की आयु में हुआ। जो पाठशाला बाद में चलने लगी उसमें सामान्यत: अध्यापक कायस्थ होते थे। tuition fee उस समय भी नहीं ली जाती थी, 'इम्ला' लिखा जाता थे। (यह तो बचपन में हमने भी लिखा था।) पहले रेत में उँगली से लिख दिया जाता था। बालक को कहा जाता था इन्हीं शब्दों के ऊपर उँगली से दोहराओ। फिर स्लेट के ऊपर हल्के से chalk से लिखते थे, उसके ऊपर मोटी chalk से लिखवाने की पद्धति थी। और आजकल तो कॉपियाँ छपने लगी हैं जिसमें dotted अक्षर लिखे होते हैं, बच्चे को कहा जाता है, इनको मिलाकर अक्षर बनाओ और चित्र बने होते हैं पक्षियों के, पशुओं के, पेड़ों के। उन चित्रों में रंग भरने की शिक्षा दी जाती है। आज के जो nursery schools हैं, उनमें इस तरह शिक्षा दी जा रही है। इस तरह की व्यवस्था उस समय भी थी इसको 'इम्ला' बोलते थे। फिर 'इम्ला' का अर्थ dictation (सुन कर) लिखना हो गया था। रामायण, महाभारत, पुराण, उपनिषद्, वेद का अध्ययन कराया जाता था। शिक्षा की व्यवस्था प्रात:काल 5 से 10 तक थी और monitor का system था। परन्तु आगे चल कर यह समय बदलता चला गया और धीरे-धीरे अंग्रेज़ी का समय आता चला गया।

1882 में Hunter commission आया। Hunter commission ने ज़िक्र किया कि अध्यापक पूरे गाँव में जा कर बच्चों को इकट्ठा करते थे। फिर एक कमरे अथवा बरामदे में ला करके उनको बैठाते थे, फिर सरस्वती और गणपति के सम्मान में आराधना करते थे उसके बाद पहाड़े बुलवाये जाते थे। Mass education प्रारम्भ हुई। मद्रास में इसको 'पियाल' बोला गया, platform को 'कोराडु' बोला गया जिसको ऊँची पीठ कहते थे, मासिक शुल्क यहाँ से प्रारम्भ हो गया। फिर आगे महाजनी school शुरू हुए जिसमें अध्यापक को नौकर रखा गया। एक व्यक्ति जो सेठ होता था school खुलवा देता था अपने बच्चों को भी पढ़वाने के लिए और मुहल्ले के बच्चों को पढ़वाने के लिए। यहाँ से school education प्रारम्भ हो गया।

हिन्दू शिक्षा कश्मीर, बनारस, मिथिला, नवद्वीप(नदिया), तन्जौर, इन सब में होती थी, दस से बारह वर्ष के लिए शिक्षा होती थी, इसको 'शलाका परीक्षा' नाम दिया गया। इस तरह वहाँ पर यह प्रारम्भ हुआ। इस समय के ग्रन्थों में **पाणिनि** की **अष्टाध्यायी, भट्टोजी दीक्षित का सिद्धान्त-कौमुदी, बोप देव का कान्तारमुग्धबोध,** इन सबके ज़िक्र आते हैं। एक दीक्षान्त समारोह का ज़िक्र है। मिथिला विश्वविद्यालय का नाम आया है। अब यह कब स्थापित हुआ होगा, इसका ज़िक्र वहाँ नहीं है परन्तु उस medieval period में इसका ज़िक्र आया। मिथिला

विश्वविद्यालय मे दीक्षान्त समारोह होता था और दीक्षान्त समारोह के समय **'क्षुरबन्धनम्'** होता था, एक छुरा बाँधा जाता था and that was tied to the dress of the graduates ऐसा आज तो नहीं है। शादी-विवाह के समय जरूर एक छुरा या तलवार बाँध देते हैं परन्तु शायद उस समय यही रहा होगा कि तुमने अध्ययन कर लिया, अब तुम जीवन में पदार्पण कर रहे हो, तुम्हारा वहाँ पर विवाह भी होगा, परिवार भी होगा, कष्ट भी आयेंगे, हमने तुम्हें जहाँ ज्ञान दिया, वहाँ हाथों में शक्ति भी देते हैं। बह्मत्व और क्षत्रत्व इन दोनों को तुम्हें साथ-साथ दे रहे हैं, अपने जीवन में जाकर इसको सँभालना। डिग्रियों के कुछ नाम थे - **'सार्वभौम'** की डिग्री, नदिया विश्वविद्यालय के वासुदेव को मिली थी। **'पीयूष-वर्षा'** और **'पक्षधारा'** डिग्री जयदेव नाम के एक विद्वान् को मिली थी। **'अकबरिया कालिदास'** की उपाधि मिली थी श्रीहरि को। **प्रणवाद्य-पातञ्जलि** की डिग्री मिली थी रामभद्र को।

शास्त्रार्थ की परम्परा थी। आज नहीं रही, समाप्त हो गई। महिला-शिक्षा वैदिक काल में थी। पुरुष-स्त्री दोनों को शिक्षा दी जाती थी। मैत्रेयी, गार्गी, आत्रेयी, सुलभा, ये नाम आते हैं। ऋग्वेद में तो मन्त्रद्रष्टा ऋषियों में 49 स्त्रियाँ ऋचीकायें हैं। पाणिनि ने कन्याओं को छात्रावास का ज़िक्र किया है। परन्तु यह जो शिक्षा की प्रथा महिलाओं में थी, केवल धनी लोगों में थी।

बौद्ध काल में भी महिलाओं की शिक्षा का थोड़ा प्रारम्भ में ज़िक्र आया। पर चौथी शताब्दी के बाद शायद स्त्री-शिक्षा समाप्त होती गई। केवल आगे चलकर के private शिक्षकों के माध्यम से महिलाओं को शिक्षा दी गई। बंगाल में युवावस्था तक लड़कों के साथ लड़कियों को पढ़ाया गया। कुछ नाम आते हैं बंगाल के इच्छावती, रुक्मिणी, मल्लिका। **धर्म-मङ्गल** एक ग्रन्थ का नाम है जिसमें पढ़ी-लिखी औरतों का ज़िक्र है। नूरजहाँ, मुमताज महल, जैबुन्निसा बेगम, दुर्गावती, चाँदवती, जहाँआरा, रजिया सुल्ताना सुशिक्षित थीं अर्थात् इससे यह तो स्पष्ट होता है कि महिलाओं के लिए शिक्षा उस समय भी थी। परन्तु आगे चल कर महिलाओं की शिक्षा समाप्त होती चली गई। शङ्कराचार्य ने तो 'स्त्री शूद्रौअधीयताम्' की बात कही थी परन्तु इस बात को सब लोगों ने माना नहीं। शङ्कराचार्य के जो शिष्य-परम्परा में हैं, उन्होंने भी नहीं माना। आप देखते हैं आज तो चारों तरफ महिलाओं की शिक्षा की व्यवस्था है। प्राचीन काल में भी थी, मध्य काल में भी थी।

राजकुमारों के लिए एक विशेष शिक्षा-व्यवस्था होती थी जैसे मैंने अभी द्रोणाचार्य की बात बताई थी। राजा जयसिंह ने भी एक संस्था प्रारम्भ की थी। शायद बनारस में भी राजकुमारों के लिए कोई संस्था चल रही है। Prince Noble 's College एक था। इस सब का तात्पर्य यही

है कि यहाँ पर राजकुमारों के लिए शिक्षा व्यवस्था अलग थी।

अंग्रेजी काल में 1823 में आते-आते, Lord Committee, 1830 में बनी। 1835 एक में Elfinstone College प्रारम्भ हुआ। English Grammar के सम्बन्ध में सब से बड़ा जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ वो 1854 में हुआ। जो शिक्षा जगत् के लोग हैं, वे जानते हैं, उसको Magna Carta बोलते हैं। एक Wood आये थे, Wood despatch उस परिवर्तन को नाम दिया गया था। वहाँ से जो आधुनिक आपकी शिक्षा है वह चली कि एक विद्यालय (School) होगा व्यवस्थित कक्षाएँ होंगी, अध्यापक कक्षा में जायेंगे। पहले तो क्या था गुरु बैठे होते थे, बालक आते थे, चरण छूते थे, प्रणाम करते थे, अध्ययन प्रारम्भ हो जाता था। कोई घण्टी नहीं बजती थी। अपनी सुविधा के अनुसार होता था, चाहे वह हिन्दुओं की शिक्षा हो, चाहे मुसलमानों की शिक्षा हो, परन्तु 1854 में जब Wood despatch आया, इसने क्रान्तिकारी परिवर्तन किया। आगे चल कर के Lord Macaulay ने एक बहुत बड़ा परिवर्तन किया। सारे देश में स्कूलों का जाल खोल दिया और कहा कि मैं यहाँ के लोगों की संस्कृति को बिल्कुल बदल कर रख दूँगा। परन्तु आगे चल कर हमारे हिन्दू भाईयों, सनातनधर्म के लोगों ने, आर्य समाज के लोगों ने, वैदिक धर्म के लोगों ने, अनेक D.A.V. School खोले, सनातन धर्म स्कूल खोले, अनेक गुरुकुल खोले और उसके माध्यम से ऐसे स्वाधीनता सेनानी तैयार किये जो ब्रिटिश राज्य को उखाड़ने में सफल हो सके।

जो आज की परम्परा है, यह अंग्रेज़ों की ही देन है, हम चाहें तो इन स्कूलों को अच्छी तरह सँभाल सकते हैं, सँवार सकते हैं। जब कोई संस्था बहुत बड़ी हो जाती है, तो उसमें कठिनाइयाँ भी बहुत आती हैं। ये जो कठिनाइयाँ हैं, ये भी अंग्रेज़ों की इस शिक्षा व्यवस्था की ही देन हैं। ठीक है, हमने इसको अपना लिया है। आवश्यकता इस बात की है कि हम इन संस्थाओं को छोटे टुकड़े में तोड़ कर के प्रारम्भ करें, अलग-अलग संस्थाएँ हों, जिनको हम अपने नियन्त्रण में रख सकें। हमारे अनेक education commission बैठ चुके हैं उसमें कोठारी आयोग को बड़ा प्रसिद्ध नाम दिया गया है। उसमें जो चार बातें प्रमुख कही गई थीं, उन प्रमुख बातों में चौथी बात है human resource development- मानव संसाधन विकास। हमने मानव संसाधन विकास के मंत्रालय बना दिए है पर वास्तव में मानव के संसाधनों का विकास नहीं हो पा रहा है। आज भी हम एक बहुत बड़ी फौज graduates की पैदा कर रहे हैं जिनको नौकरी नहीं मिल पा रही है। और जिनको नौकरी नहीं मिल पाती, वे एक पाठ्यक्रम से दूसरे में, दूसरे से तीसरे में, तीसरे से चौथे में प्रवेश लेते चले जाते हैं, परेशान होते रहते हैं। यह कठिनाई आ रही है। आज की माँग के अनुसार हमें पाठ्यक्रमों को प्रारम्भ करना चाहिए। Management के Computer

के Pharmacy के Medical के Enginnering के courses हैं, आज इनकी काफी उपयोगिता है, हमें इन पाठ्यक्रमों को प्रारम्भ करना चाहिए। परन्तु इन पाठ्यक्रमों के साथ-साथ जैसा मैंने बताया था, जो commission ने ज़िक्र किया था, अध्यापक गाँव में पूरे बालकों को इकट्ठा करते, सरस्वती और गणपति की आराधना में कुछ शब्द बोलते, तब अध्ययन प्रारम्भ करते। हमारी इन शिक्षण संस्थाओं में कहीं भी धर्म-शिक्षा का कोई ज़िक्र भी नहीं किया गया। अध्यापक सोचते हैं किसी तरह से एक session टला, समय बीत गया, परमात्मा हमारी रक्षा करे- इस तरह से हम लोग चल रहे हैं। यदि छोटे-छोटे group होंगे, हम उन बच्चों को सिखा सकेंगे। वैसे तो मैं कहता हूँ आचरण की भाषा मौन होती है। जैसा आचरण बड़ों का होगा, वैसा ही आचरण अगली पीढ़ी का भी होगा। परन्तु जब अगली पीढ़ी को भरण-पोषण के साधन नहीं मिल रहे हैं, तो वह गलत साधनों की ओर प्रवृत्त हो रही है क्योंकि प्रारम्भ में ही किसी आदर्श एवं ध्येय की नींव नहीं बाँधी जाती है। हम उनका सही मार्ग-दर्शन नहीं कर पा रहे हैं।

मैंने यह सारा इतिहास आप के सामने प्रस्तुत करने की कोशिश की। कुछ बातें मैं ऐसी भी कह गया जो बहुत स्पष्ट नहीं थी, समय की सीमाओं में उन बातों को मैं खोल कर नहीं कह पाया। पर मुख्य बात यह है कि जो हमारा प्राचीन युग था उसमें एक से एक की शिक्षा-व्यवस्था थी। हम उसी तक सीमित भले ही न रहें। शिक्षा-सम्बन्धी जो आयोग बने, एक अध्यापक के साथ बीस बालक अधिकतम कक्षा में रहें, अध्यापक उनका ध्यान रख सकेंगे तो शायद हम कुछ अच्छा काम कर सकें। पर क्या करें आज तो हमारी कक्षाओं में एक और नब्बे का अनुपात है, एक और एक सौ दस का अनुपात है। इस अनुपात को समाप्त करने की आवश्यकता है। नैतिक शिक्षा देने की ज़रूरत है। अध्यापक का, आचार्य का, माता का, पिता का, इनके आचरण का बहुत अच्छा आदर्श बनाने की ज़रूरत है ताकि आने वाली पीढ़ी अच्छी हो सके।

आचरण की भाषा मौन होती है, ब्रह्मचारी आचरण से सीखता है, जैसी कार्यवाही जैसे कार्यकलाप बड़े लोग करते हैं, वह वैसा ही करता है और यदि बड़े अच्छा करेंगे तो निश्चय ही हमारी आने वाली पीढ़ी **'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव'**, इस संस्कार को लेकर आगे बढ़ेगी और हम शायद सफल हो सकेंगे भावी पीढ़ी को श्रेष्ठ बनाने में, देश को कर्णधार देने में। और जैसा मैंने अध्यापक का उदाहरण दिया था जिसने अपने राजा को भी कह दिया था 'महाराज आप न आएँ, यदि इन्होंने आप को आदर्श मान लिया तो जिस आदर्श को मैं प्रस्तुत करना चाहता हूँ, शायद वह नहीं हो पायेगा'। हमें भी समय समय पर श्रेष्ठ पुरुषों को बुलाना चाहिए, सन्यासियों को बुलाना चाहिए, महान् सन्तों को बुलाना चाहिए। जैसे मैंने कहा 'ज्ञान-प्रवाह' जैसी खानगाहें ऐसी जगह हुआ करती थीं जहाँ सन्त लोग बैठे हुआ करते थे, लोग

अपने कष्टों के निवारण के लिए वहाँ आते थे। हरिद्वार में अनेक मठ हैं जहाँ सन्तों, साधुओं के पास लोग जाते हैं। ऐसे स्थान सर्वत्र विद्यमान होने चाहिए, जहाँ नहीं हैं वहाँ बनाये जाने चाहिए, उनका परिवेश बिल्कुल सन्तों की सुगन्धि से भरा, सत्सङ्गति जैसा लगे, वहाँ आ कर आनन्द आए, ऐसा होना चाहिए। कन्याकुमारी में Vivekananda Rock पर जाने का मौका मिला। जब हम अन्त:स्थल में जाते हैं, गर्भ-गृह में जाते हैं, पता लगाता है बड़ी शान्ति है। ऐसे शान्ति के स्थान हमें उपलब्ध होने चाहिए। मैं जानता हूँ हमारे परिचय में कुछ लोग हैं जो प्रात: सायं योग करते हैं या एक घण्टे के लिए ध्यान अवस्था में बैठते हैं। शान्ति से रहते हैं या संगीत के प्रति जिनकी रुचि है, उनकी आयु लम्बी है। दिन भर की न जाने कितनी उहापोह है, कितनी कठिनाइयाँ हैं, कितनी परेशानियाँ हैं, प्रात:सायं हम परमात्मा की आराधना करेंतो जीवन सुधर सकता है। Robert Sotheby की एक कविता मुझे ध्यान आ रही है-

'I seek the mighty minds of old
Wherever these casual eyes are cast
I see the mighty minds of old'

इस पुस्तकालय में बैठे हुए जहाँ भी मेरी निगाहें जाती हैं, मैं देखता हूँ इन ग्रन्थों के माध्यम से प्राचीन काल के जो महान मस्तिष्क-धारी लोग थे, वे मेरे सामने साकार हो जाते हैं। आइये, हम इनसे प्रेरणा ग्रहण करें, इनसे शिक्षा ग्रहण करें, आने वाली पीढ़ी को सुधारें, अपना खुद का सुधार करें-

'मनुर्भव । जनय दैव्यं जनम्'
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

यह व्याख्यान दिनांक 27 अप्रैल 1998 को ***ज्ञान-प्रवाह***
सेन्टर फॉर कल्चरल स्टडीज़, वाराणसी, में दिया गया